[This question paper contains 8 printed pages.]

(11) Your Roll No. 2022

Sr. No. of Question Paper : 3009 **A**

Unique Paper Code : 12051601

Name of the Paper : हिंदी आलोचना

Name of the Course : **BA (H) Hindi – CBCS**

Semester : VI

Duration : 3 Hours Maximum Marks : 75

<u>छात्रों के लिए निर्देश</u>

1. इस प्रश्न-पत्र के मिलते ही ऊपर दिए गए निर्धारित स्थान पर अपना अनुक्रमांक लिखिए ।

2. **सभी** प्रश्न अनिवार्य हैं ।

1. निम्नलिखित गद्यांशों के संदर्भ को स्पष्ट करते हुए व्याख्या कीजिए :-

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

(10+10+10)

(क) नीति-शास्त्र और साहित्य-शास्त्र का लक्ष्य एक ही है, केवल उपदेश की विधि में अंतर है। नीति-शास्त्र तर्कों और उपदेशों के द्वारा बुद्धि और मन पर प्रभाव डालने का यत्न करता है, साहित्य ने अपने लिए मानसिक अवस्थाओं और भावों का क्षेत्र चुन लिया है। हम जीवन में जो कुछ देखते हैं, या जो कुछ हम पर गुजरती है, वही अनुभव और वही चोटें कल्पना में

पहुँचकर साहित्य-सृजन की प्रेरणा देती हैं। कवि या साहित्यकार में अनुभूति की जितनी तीव्रता होती है, उसकी रचना उतनी ही आकर्षक और ऊँचे दर्जे की होती है। जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति जागृत न हो, जो हममें सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दृढ़ता न उत्पन्न करे, वह आज हमारे लिए बेकार है। वह साहित्य कहाने का अधिकारी नहीं। पुराने जमाने में समाज की लगाम मजहब के हाथ में थी। मनुष्य की आध्यात्मिक और नैतिक सभ्यता का आधार धार्मिक आदेश था और वह भय या प्रलोभन से काम लेता था। पुण्य-पाप के मसले उसके साधन थे। अब साहित्य ने यह काम अपने जिम्मे ले लिया है और उसका साधन सौंदर्य-प्रेम है। वह मनुष्य में इसी सौंदर्य-प्रेम को जगाने का यत्न करता है।

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

अथवा

वर्तमान युग की ऐसी प्रवृत्ति है। जब मानसिक बंधनों की बाधा घातक समझ पड़ती है और इन बंधनों को कृत्रिम और अवास्तविक माना जाने लगता है। यथार्थवाद क्षुद्रों का ही नहीं, अपितु महानों का भी है। वस्तुतः यथार्थवाद का मूल भाव है- वेदना। जब सामूहिक चेतना छिन्न-भिन्न होकर पीड़ित होने लगती है, तब वेदना की विवृत्ति आवश्यक हो जाती है। कुछ लोग कहते हैं- साहित्यकार को आदर्शवादी होना चाहिए और सिद्धांत से ही

आदर्शवादी धार्मिक प्रवचन कर्ता बन जाता है। वह समाज को कैसा होना चाहिए, यही आदेश करता है। और यथार्थवादी सिद्धांत से ही इतिहासकार से अधिक कुछ नहीं ठहरता, क्योंकि यथार्थवाद इतिहास की संपत्ति है। वह चित्रित करता है कि समाज कैसा है या था, किन्तु साहित्यकार न तो इतिहासकर्ता है और न धर्म शास्त्र प्रणेता। इन दोनों के कर्तव्य स्वतंत्र हैं। साहित्य इन दोनों की कमी को पूरा करने का काम करता है। साहित्य, समय की वास्तविक स्थिति क्या है, इसको दिखाते हुए भी उसमें आदर्शवाद का सामंजस्य स्थिर करता है। दुःख-दग्ध जगत और आनंदपूर्ण स्वर्ग का एकीकरण साहित्य है, इसलिए असत्य अघटित घटना पर कल्पना को वाणी महत्वपूर्ण स्थान देती है, जो निजी सौंदर्य के कारण सत्य-पद पर प्रतिष्ठित होती है। उसमें विश्वमंगल की भावना ओत-प्रोत रहती है।

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

(ख) तुलसी के राम उनकी आशाओं के केंद्र ही नहीं हैं, मनुष्यों में वह जिन तमाम नैतिक गुणों को प्यार करते थे, वह उनके प्रतीक भी थे। ब्राह्मण में वह भले ही निर्गुण निर्विकार हों, मानव रूप में वह किसी देश-काल की सीमाओं में गतिशील समाज के मानव का ही गतिशील प्रतिबिंब हो सकते हैं। तुलसी के राम भारतीय जनता के नैतिक गुणों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनके चरित्र में पितृ भक्ति, भातृ प्रेम आदि पर बार-बार लिखा गया है, लेकिन तुलसीदास का लक्ष्य परिवार में पिता के अधिकार की

रक्षा करना न था। राम की मानवीय सहानुभूति माता, पिता, भाई, निषाद सभी के लिए है। विशेषता यह है कि जो जितना त्यागी है, निःस्वार्थ है और दलित है, राम का प्रेम उसके लिए उतना ही अधिक है। भरत और निषाद पर उनका प्रेम इसी कारण है। यह प्रेम पारिवारिक संबंधों पर ही निर्भर नहीं है, उसका आधार व्यापक सामाजिक संबंध हैं। समाज में चाहे दुखी-दीनों और निःस्वार्थ सेवकों को कोई न पूछे, राम उन्हें पूछने वाले हैं। तुलसी के राम न्याय-अन्याय के संघर्ष में तटस्थ नहीं हैं। वह न्याय का सक्रिय पक्ष लेते हैं। लक्ष्मण के मुकाबले वह ज्यादा धैर्य दिखाते हैं, लेकिन उनके धैर्य की एक सीमा है। सीमा पार होने पर वह शस्त्र उठाने में जरा भी आगा-पीछा नहीं करते। यह गुण हमारी जनता का विशेष गुण है। वह बड़ी सहनशील है लेकिन एक सीमा तक ही।

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

अथवा

प्रयोग का हमारा कोई वाद नहीं है, इसको और भी स्पष्ट करने के लिए एक बात हम और कहें। प्रयोग निरंतर होते आये हैं और प्रयोगों के द्वारा ही कविता या कोई भी कला, कोई भी रचनात्मक कार्य, आगे बढ़ सका है। जो कहता है कि मैंने जीवन-भर कोई प्रयोग नहीं किया, वह वास्तव में यही कहता है कि मैंने जीवन भर कोई रचनात्मक कार्य करना नहीं चाहा;

ऐसा व्यक्ति अगर सच कहता है तो यही पाया जायेगा कि उसकी 'कविता' कविता नहीं है; उसमें रचनात्मकता नहीं है, वह कला नहीं शिल्प है, हस्तलाघव है। जो उसी को कविता मानना चाहते हैं, उनसे हमारा झगड़ा नहीं है। झगड़ा हो ही नहीं सकता। क्योंकि हमारी भाषाएं भिन्न हैं, और झगड़े के लिए भी साधारणीकरण अनिवार्य है। लेकिन इस आग्रह पर स्थिर रहते हुए भी हमें यह भी कहना चाहिए कि केवल प्रयोगशीलता ही किसी रचना को काव्य नहीं बना देती। हमारे प्रयोग का पाठक या सहृदय के लिए कोई महत्त्व नहीं है, महत्त्व उस सत्य का है जो प्रयोग द्वारा हमें प्राप्त हो। 'हमने सैकड़ों प्रयोग किये हैं' यह दावा लेकर हम पाठक के सामने नहीं जा सकते, जब तक हम यह न कह सकते हों कि 'देखिए हमने प्रयोग द्वारा यह पाया है।' प्रयोगों का महत्त्व कर्ता के लिए चाहे जितना हो, व सत्य की खोज की लगन उसमें चाहे जितनी उत्कट हो; सहृदय के निकट वह सब अप्रासंगिक है।

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

(ग) अभिव्यक्ति का संघर्ष दीर्घ होता है। कला का यह तीसरा क्षण दीर्घ होता है। उस संघर्ष में अभिव्यक्ति के स्तर पर आते-आते, हमारे मनोमय तत्त्व-रूप बदलने लगते हैं। होता यह है कि उस संघर्ष के दौरान में भाषा के भीतर अवस्थित ज्ञान-परंपरा और भाव-परंपरा के कारण, जो पहले से ही शब्द-संयोग बने हुए

हैं, उन शब्द संयोगों के साथ अनिवार्य रूप से जुड़े जो अर्थानुषंगों हैं, उन अर्थानुषंगों के प्रभाव गें आकर, सगशील–सगरूप अर्थानुषंगो को आत्मसात कर, मनोमय रूप– तत्त्व अपने को और पुष्ट करते हैं। फलत: वे इस हद तक बदले हैं। जब वे अपने खास साइज और अपनी खास काट की अभिव्यक्ति पा लेते हैं, तब उनके तत्त्व और रूप पहले से बहुत कुछ बदले हुए होते हैं। सामाजिक सम्पदा होने के कारण भाषा मनोनय रूप–तत्त्वों को उनके प्रकट होने के दौरान घटा–बढ़ा देती है और अनजाने ढंग से उनमें नए रूप–तत्त्व ला देती है। साथ ही यह अभिव्यक्ति–संघर्ष भाषा को कुछ बदल देता है, उसे नवीन शब्द–संयोग, नवीन अर्थवत्ता और नयी भंगिमाएँ और व्यंजनाएँ देता है। प्रकार कलाकार भाषा का भी निर्माण करता है। अभिव्यक्ति समाप्त होते ही, उसके संघर्ष का अंत होते ही, कला का तीसरा क्षण भी समाप्त होता है।

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

अथवा

लेकिन कहानी में मैं जब सार्थकता की बात कहता हूँ तो इसका यह अर्थ है कि कहानी हमारे जीवन की छोटी से छोटी घटना में भी अर्थ खोज लेती है या उसे अर्थ प्रदान कर देती है। इस युग में जब कि 'निरर्थकता' की भावना व्यापक रूप से फैली हुई है और एक वर्ग के लोगों द्वारा फैलाई भी जा रही है, कहानी

जैसे छोटे गद्य-रूप से सबसे पहले सार्थकता की मांग की जा सकती है। यह नहीं है कि छोटी-छोटी बातें ही अर्थहीन प्रतीत होती हों कुछ लोगों को अपना सारा जीवन ही अर्थहीन मालूम होता है और कुछ को तो दुनिया का सारा कारोबार भी व्यर्थ लगता है। परन्तु लघुता में निरर्थकता का खतरा सबसे अधिक है। कहानी की सृष्टि इसी लघुता को सार्थकता प्रदान करने के लिए हुई थी। लोगों की यह धारणा है कि कहानी जीवन के एक टुकड़े को लेकर चलती है, इसलिए उसमें कोई बड़ी बात कही ही नहीं जा सकती। कहानी जीवन के टुकड़ों में निहित 'अन्तर्विरोध', 'द्वंद्व', 'संक्रान्ति' अथवा क्राइसिस को पकड़ने की कोशिश करती है और ठीक ढंग से पकड़ में आ जाने पर यह खंडगत अन्तर्विरोध की वृहद् अन्तर्विरोध के किसी न किसी पहलू का आभास दे जाता है।

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

2. नवजागरण के परिप्रेक्ष्य में भारतेन्दु युगीन हिंदी आलोचना पर विचार कीजिए। (15)

अथवा

स्वतंत्रता पूर्व हिंदी आलोचना के विकास पर प्रकाश डालिए।

3. 'काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था' के आधार पर आचार्य रामचंद्र

शुक्ल की आलोचना की मुख्य विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए। (15)

अथवा

'दूसरा सप्तक की भूमिका' में निहित अज्ञेय के विचारों को स्पष्ट कीजिए।

4. हिंदी आलोचना के विकास में नामवर सिंह के योगदान का विश्लेषण कीजिए। (15)

Deshbandhu College Library
Kalkaji, New Delhi-19

अथवा

'रेणु : समग्र मानवीय दृष्टि' पाठ का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए।